साथ 15 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट+30 कि.ग्रा. मैगनीज सल्फेट प्रति हे. देने से उपज अच्छी होती है।

खरपतवार नियंत्रण

बुआई के 20 दिनों के बाद फसल के खेत से खरपतवार निकाल देनी चाहिए साथ ही साथ अनावश्यक पौधों की छंटनी कर देनी चाहिए। दो या तीन बार गुड़ाई कर देने से खरपतवार पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

पौधा संरक्षण

अधिक उपज के लिए पौधा संरक्षण बहुत जरूरी है। वैसे इस फसल में रोग एवं कीटों का प्रकोप

बहुत कम होता है। कीटों में मुख्यतः भुआ–पिल्लू का आक्रमण ही होता है। छोटी अवस्था में ये अधिकतर पत्तियों के नीचे गुच्छों में रहते हैं। ये नयी–नयी पत्तियों को खा जाते हैं। जिससे पौधों का बढ़ोतरी नहीं हो पाती है। इस अवस्था में उनकी रोकथाम करना आसान होता है। ऐसे समय में उन पत्तियों को तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए या फसल के ऊपर कीटनाशक दवा के रूप में नुवान (100%) का 300 मि.ली. 800 लीटर पानी में घोल कर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए। इस क्षेत्र में चूर्णी फफूँद रोग फसल को प्रायः नुकसान पहुँचाती है। इस रोग में पत्तियों पर छोटे छोटे रूई के समान सफेद धब्बे जैसे बनते हैं जो बाद में पूरी पत्तियों में फैल जाते हैं। रोग की उग्र अवस्था में पत्तियाँ पूरी तरह सड़ जाती है। इस रोग से फसल के बचाने के लिए 0.3 प्रतिशत सल्फेक्स का छिड़काव करें।

कटनी एवं दौनी

फसल पकने पर पौधों की पत्तियाँ तथा सिरे भूरे रंग के हो जाते हैं और सूखने लगते हैं, ऐसे समय में फसल की कटाई करनी चाहिए। पौधों को कुछ दिनों के लिए सूखने के लिए छोड़ देना चाहिए। सूखने पर डंडा से पीटकर बीजों को अलग करके सफाई कर लेनी चाहिए। बीजों को भली–भांति साफ एवं सुखाकर भंडारण कर लेना चाहिए इसके लिए मिट्टी के बर्तनों या बीन का उपयोग करना चाहिए।

संभावित उपज

उपरोक्त उन्नत कृषि तकनीकों को अपनाने से फसल की औसत उपज 5–7 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त हो सकती है।

लेखकः

डॉ. सोहन राम एवं डॉ एस.के. सिंह

वरीय वैज्ञानिक

पौधा प्रजनन एवं आनुवंशिकी विभाग

बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची, झारखण्ड

* प्रसार पुस्तिका में उल्लेखित विचार लेखक के हैं। किसी भी प्रकार के असंगत विचार के प्रति प्रकाशक उत्तरदायी नहीं होंगे।

132/01/06 कैलाश पेपर, फोन : 0651-2532251

समेति तथा कृषि एवं गन्ना विकास विभाग, झारखण्ड सरकार के सौजन्य से प्रकाशित

एग्रीरिफोर्म्स तकनीकी प्रसार पुस्तिका : 5/2006

झारखण्ड सरकार

झारखण्ड में सरगुजा की वैज्ञानिक खेती

राज्य स्तरीय कृषि प्रबंधन, प्रसार-सह-प्रशिक्षण संस्थान

(समेति, झारखण्ड)

कृषि भवन प्रांगण, काँके रोड, राँची

सरगुजा झारखण्ड राज्य का एक प्रमुख तेलहनी फसल हैं। सरगुजा को 'रामतिल' के नाम से भी जाना जाता है। इस राज्य में इसकी खेती खरीफ में कुछ विलम्ब से की जाती है। पठारी क्षेत्रों के किसान इसकी खेती सदियों से करते आ रहे हैं। इसके तेल को खाने के अलावा रोशनी करने एवं मालिश तथा दवाई के काम में भी लाया जाता है। किसान इसकी खेती अधिकतर कम उपजाऊ वाले जमीन में करते हैं। इसलिए इसकी उत्पादकता काफी कम हो जाती है। यह फसल जनजातीय क्षेत्रों की सीमान्त और उपसीमान्त भूमि में व्यापक पैमाने पर लगाई जाती है। अच्छी गहराई और अच्छी बनावट वाली दोमट मिट्टी में भी जहाँ पानी की निकासी की अच्छी व्यवस्था होती है, यह फसल अच्छी उपज देती है। विषम परिस्थितियों में द्वितीय लाभदायक फसल के रूप में गुन्दली, उरद, गोड़ा धान काटने के बाद

इसकी खेती इन क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर की जाती है। तेल की मात्रा 35 से 45 प्रतिशत एवं प्रोटीन की मात्रा 25 से 35 प्रतिशत होने के कारण महत्वपूर्ण तेलहनी फसल मानी जाती है। सरगुजा देश में प्रमुख रुप से पर्वतीय जनजातीय क्षेत्रांतर्गत अनउपजाऊ भूमि में लगभग 5.42 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में उगाया जाता है। जिसका वार्षिक उत्पादन 1.62 लाख टन एवं औसत उत्पादन 299 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर है। इसकी औसत उपज क्षमता उचित शस्य प्रबन्धन होने पर 500–600 कि.ग्रा. हेक्टेयर है। यदि उन्नत तकनीक के साथ उचित अनुशंसित विधियों के अपनायें तो 1000 – 1200 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर तक उपज लिया जा सकता है। किसान ज्यादातर इसे कम उपजाऊ भूमि में छींटकर लगाते हैं। उन्नत कृषि तकनीकों को नहीं अपनाने के कारण उन्हें कम उपज प्राप्त होती है। किसान द्वारा सरगुजा की कम उपज पाने के निम्नलिखित मुख्य कारण हैं –

1. उन्नत किस्मों के बीजों का अभाव
2. खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग न होना,
3. बीजों को छींटकर लगाना,
4. पौधा संरक्षण के उपाय नहीं अपनाना,
5. प्रशिक्षण एवं प्रसार कार्यों का अभाव,

अधिक उपज प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित उन्नत कृषि तकनीकों पर ध्यान देना आवश्यक है।

खेत की तैयारी

देशी हल के द्वारा खेतों को दो बार गहरी जोताई कर पाटा लगा देने से खेत सरगुजा बोआई के लिए अच्छी हो जाती है। अंतिम जुताई के समय 25 कि.ग्रा./हे. लिन्डेन धूल जमीन में मिला देने से दीमक का प्रकोप कम होता है।

उन्नत किस्म

1. बिरसा सरगुजा–1, परिपक्वता–95–100 दिन
   उपज – 600 – 700 कि.ग्रा./हे.
   तेल की मात्रा – 41.7 प्रतिशत
2. बिरसा सरगुजा–2, परिपक्वता–95–98 दिन
   उपज – 700–800 कि.ग्रा./हे.
   तेल की मात्रा – 40 प्रतिशत

बीज दर

इस फसल के लिए 4–5 किलो ग्राम बीज प्रति हेक्टेयर (जब पंक्तियों में लगाया जाता है) पर्याप्त है। परन्तु इस फसल को छिड़काव विधि से बुआई करने पर प्रति हेक्टेयर 5–6 कि.ग्राम बीज की जरूरत होती है।

बीजों का उपचार

बीज जनित या मृदा जनित रोगों से फसल की बचाव के लिए बोने से पहले बीजों को थिरम या कैप्टन 3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित किया जाना चाहिए।

बुआई का समय

सरगुजा की बुआई मुख्यतः दो समय पर की जाती है। खरीफ की फसल के लिए बुआई का सबसे अच्छा जुलाई के अंतिम सप्ताह से लेकर अगस्त की तीसरे सप्ताह तथा द्वितीय फसल के रूप में सितम्बर माह तक उपयुक्त है।

बुआई की विधि

ऐसा देखा गया है कि फसल को छिड़काव विधि से लगाने की अपेक्षा कतारों में लगाने से अधिक उपज प्राप्त होता है। अतः फसल को कतारों में ही लगायें। कतारों की दूरी 30 से.मी. तथा पौधों की दूरी 10–15 से.मी. रखने से उपयुक्त पौध संख्या 2–2.5 लाख प्रति हेक्टेयर होती है। बीजों के समान वितरण हेतु 2 : 20 बीज : गोबर की खाद या बालू मिलाकर बुआई करनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

अच्छी उपज के लिए 20:20:15, नेत्रजन : स्फुर पोटाश की मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से डालना चाहिए। यूरिया की आधी तथा सिंगल सुपर फॉस्फेट एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुआई के समय तथा यूरिया की शेष आधी मात्रा बुआई के 25–30 दिनों के बाद निकाई–गोड़ाई करने के बाद डालनी चाहिए। अनुशंसित मात्रा के

दिनों बाद करें। फूल आते समय सिंचाई नहीं करनी चाहिए। क्योंकि इससे फसल के गिरने का डर रहता है।

खुटाई : जब पौधों की लम्बाई लगभग 8 इंच की हो जाए तो उसकी ऊपरी शाखाओं की खुटाई करें। इससे शाखाएँ अधिक निकलती है तथा फूल और फलियाँ भी अधिक लगते है।

फसल सुरक्षा

रोग का रोकथाम : चने की फसल को मुख्यतः दो प्रमुख फफूँद जनित रोग *'उकठा'* एवं *'झुलसा'* सर्वाधिक नुकसान पहुँचाते है।

उकठा रोग : उकठा रोग के प्रकोप से पौधे मुरक्षाकर सूख जाते हैं, यदि पौधे की जड़ को बीच से चीर कर देखा जाय तो अन्दर से रंग भूरा या काला दिखाई देता है। इसके रोकथाम के लिए बुआई से पूर्व बीज को कैप्टाफ 75 एस.डी. या फोल्टाफ 80 डी. एस. 3 ग्राम प्रति किलो बीजदर से उपचारित करें। रोगरोधी किस्में जैसे पंत जी. 114, एवं सी. 235 का प्रयोग उत्तम है। इसके अतिरिक्त जिन खेतो में उकठा रोग लगता हो उनमें बुआई नवम्बर माह के प्रथम पक्ष में करें। इस रोग की रोकथाम के लिए फसल चक्र अपनाना चाहिए। जिस खेत में यह रोग लगता हो उस खेत में तीन साल तक चना न लगायें।

झुलसा रोग : इस रोग के लक्षण फूल निकलने से पूर्व पत्तियों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे के रूप में दिखाई देने लगते है, साथ ही फूलों पर भी गहरे भूरे रंग के धब्बे बन जाते है, जिससे फलियाँ नहीं बन पाती तथा फूल सूख जाते है।

इसके रोकथाम हेतु जिंक मैंगनीज कार्बामेट 20 कि.ग्रा. अथवा जिरम 80 प्रतिशत 2 कि.ग्रा./हे. की दर से फूल आने से पूर्व छिड़काव करें तथा उसके 10 दिन बाद दूसरा छिड़काव करें।

कीट एवं रोकथाम

कड़वा कीट एवं दीमक : इस कीट की सूंडी भूरे रंग की होती है जो रात्रि के समय पौधों को जमीन की सतह से काटती है।

इसकी रोकथाम के लिए बुआई से पूर्व खेत में लिण्डेन 6 प्रतिशत चूर्ण को 30 कि.ग्रा. अथवा सेवीडाल 4 प्रतिशत धूल 20–25 कि.ग्रा. की दर से मिट्टी में मिलाना चाहिये। भूमि उपचार न होने पर यदि कीट का प्रकोप हो तो ट्राइम्लोरोफेन 5% चूर्ण 20–25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से भूरकाव करें।

फली बेधक : इसकी सूंडी हल्के रंग की होती है। सूडियाँ फलियों में छेद करके अपने सिर को फलियों के अन्दर डालकर दानों को खाती है।

इसके रोकथाम के लिये फलियाँ बनना शुरू होते ही इन्डोसल्फान 35 ई.सी. की 1.5 लीटर मात्रा या क्यूनाल्फास 25 ई. सी. की 1.5 लीटर मात्रा 400 से 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टर की दर से छिड़काव करें।

कटाई एवं भण्डारण : जब फलियाँ हल्की पड़ जाये और पत्तियाँ पूर्णतः भूरी हो जाये तब फसल की कटाई कर ले। जहाँ तक संभव हो प्रातः काल में ही कटनी करनी चाहिए। इससे दानों के खेत में झड़ने की कम संभावना रहती है। फसल को 2–3 दिनों तक धूप में सुखाने के बाद उसकी दौनी करनी चाहिए। चने में कीट अधिक लगता है। अतः बीज का भण्डारण भली–भांति सुखाने के बाद वायुरूद्ध बोरे में भर कर सुरक्षित गोदामों में करना चाहिए।

लेखक:

डॉ. सोहन राम, डॉ. नूतन वर्मा
एवं डॉ. एस. के. सिंह

पौधा प्रजनन एवं आनुवंशिकी विभाग
बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची, झारखण्ड

* प्रसार पुस्तिका में उल्लेखित विचार लेखक के हैं। किसी भी प्रकार के असंगत विचार के प्रति प्रकाशक उत्तरदायी नहीं होंगे।

132/01/06 कैलाश पेपर, फोन : 0651.2532251

समेति तथा कृषि एवं गन्ना विकास विभाग, झारखण्ड सरकार के सौजन्य से प्रकाशित
एग्रीरिफोंम्स तकनीकी प्रसार पुस्तिका : 6/2006

झारखण्ड सरकार

झारखण्ड में चने की वैज्ञानिक खेती

राज्य स्तरीय कृषि प्रबंधन, प्रसार-सह-प्रशिक्षण संस्थान
(समेति, झारखण्ड)
कृषि भवन प्रांगण, काँके रोड, राँची

चना एक महत्वपूर्ण दलहनी फसल है। शाकाहारी भोजन में दालों का हमारी प्रतिदिन के खुराक में एक विशिष्ट महत्व है, क्योंकि इसमें प्रोटीन की प्रचुरता होती है जो कि हमारे शरीर के लिए अत्यन्त उपयोगी है। पोषण की दृष्टि से इसमें खाद्यान की तुलना में दो से तीन गुणी अधिक प्रोटीन पायी जाती है। इसके साथ–साथ दलहन से पाई जाने वाली प्रोटीन के अमिनों अम्ल के संगठन में यह विशेषता होती है कि यदि दलहन को धान्य के साथ मिलाकर भोजन लिया जाय तो भोजन का जैविक महत्व बढ़ जाता है। इस क्षेत्र में दलहनी फसलों की औसत उपज कम होने का मुख्य कारण उन्नत किस्म के बीज किसानों को पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं होना एवं उचित देखभाल की कमी आदि है। अतः उन्नत किस्म के साथ–साथ वैज्ञानिक कृषि प्रणालियाँ अपनाकर चने की भरपूर उपज ली जा सकती है तथा अन्य फसलों की तुलना में अधिक आय प्राप्त की जा सकती है।

चने की उन्नत किस्में : चने की उन्नत किस्में जो इस क्षेत्र के लिए अनुशंसित की गई है, वह असिचिंत एवं विलम्ब से बुआई के लिए उपयुक्त है।

बी.आर.-77 : उपज क्षमता 18–20 क्वि./हे, अधिक उपज देने वाली किस्म है। 135 – 140 दिनों में पक कर तैयार हो जाती है। इसके बीज मध्य आकार के एवं हल्के भूरे रंग के होते है। इसके पौधे आधे खड़े होते है और फूल गुलाबी रंग के होते है। यह किस्म मिश्रित खेती के लिए उपयुक्त है इसके साथ गेहूँ उगाया जा सकता है।

एच.-208 : उपज क्षमता 18–20 क्वि./हे. के साथ उच्च उपजशील प्रभेद है, 140–145 दिनों में पक कर तैयार हो जाती है। इस किस्म की अनुकूलनशीलता व्यापक है तथा विलम्बित बोआई नवम्बर के अन्त में भी इससे अच्छी उपज मिलती है। शुष्कतर बरानी क्षेत्रों के लिए यह प्रभेद सर्वाधिक उपयुक्त है।

पन्त जी. 114 : यह किस्म एच. 208 से अधिक उपजशील है। यह 140–145 दिनों में परिपक्व होता है। इसकी औसत उपज 25–30 क्विं/हे. है। इसके पौधे आधे ऊर्ध्व एवं मध्यम लम्बे होते हैं। इसके फूल गुलाबी रंग के होते है तथा बीज मध्यम आकार के एवं पीले भूरे रंग के होते है। यह किस्म उकठा रोग के प्रति अवरोधी है।

बी.जी. 256 : यह किस्म भी 140 – 145 दिनों में पककर 18–20 क्विं/हे. की औसत उपज देती है। इस किस्म के पौधे मध्यम आकार के होते है तथा बीज हल्के भूरे रंग के होते है।

राधे : यह किस्म 140–145 दिनों में पककर 20–22 क्विं./हे. की औसत उपज देती है। इस किस्म के पौधे मध्यम आकार के होते है तथा बीज बड़े आकार के एवं भूरे रंग के होते है।

भूमि का चुनाव एवं तैयारी : चिकनी दोमद वाली भारी मृदा, जिसका पी.एच. मान 6–7 हो, इस फसल के लिए उपयुक्त है। भूमि तैयार करने के लिए मिट्टी पलटने वाले हल से एक जुताई करके दो जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से करना चाहिए। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा लगाना आवश्यक है। लेकिन खेत की तैयारी करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि मध्यम आकार के ढेले अवश्य बुआई के समय रहें। यदि खेत की मिट्टी ज्यादा भूरभूरी होगी तो असमय वर्षा से फसल को काफी नुकसान उठाना पड़ सकता है।

बीज दर एवं बुवाई का उचित समय : चने का बीज दर 75 किलो ग्राम प्रति हेक्टर है। छोटे बीजों के लिए 65 – 70 कि.ग्रा. रखें। असिंचित क्षेत्रों में सितम्बर के अन्तिम सप्ताह से मध्य अक्टूबर तक तथा सिंचित क्षेत्रों में मध्य अक्टूबर से नवम्बर प्रथम पखवाड़े तक बुवाई कर सकते है। फसल अधिक देरी से बोने पर उपज घट जाती है। कतार से कतार की दूरी 30 से.मी. एवं पौधो की दूरी 8–10 से.मी. रखते हुए बीज को 5 से 6 से.मी. गहरा बोये।

बीजोपचार : जड़ गलन एवं उकठा रोग की रोकथाम के लिए बुआई से पूर्व बीज को कैप्टाफ 75 एस.डी. या फोल्टाफ 80 डी. एस. तीन ग्राम प्रति किलो बीजदर से उपचारित करे इसके अतिरिक्त बीज में 2.5–3 ग्राम थिरम या कैप्टान अथवा बेविस्टीन प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से मिला दें। ऐसा करने से बीज द्वारा आने वाली बीमारियाँ नष्ट हो जाती है। सबसे अन्त में राइजोबियम कल्चर से बीजोपचार करें।

राइजोबियम कल्चर प्रयोग करने की विधि:

बीज बोने से पहले 200 ग्राम गुड़ 1 लीटर पानी में डालकर 15 मिनट तक उबालें। अच्छी प्रकार ठंडा होने पर इस घोल में 2 पैकेट राइजोबियम कल्चर मिला दें। एक एकड़ के लिए पर्याप्त बीज को कल्चर के घोल में डालकर साफ हाथों से अच्छी तरह मिला दें। इसे अखबार या साफ कपड़े पर छाया में आधे घंटे तक सुखने दें। इस प्रकार उपचारित बीजों की बुआई शीघ्र कर दें।

उर्वरक : मिट्टी परीक्षण के आधार पर उर्वरक का प्रयोग करें। चने की फसल दलहनी वर्ग में आती है। अतः इसे नाइट्रोजन की विशेष आवश्यकता नहीं होती है। प्रारम्भ में राइजोबियम जीवाणुओं के क्रियाशील होने तक 15–20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन तथा 40 कि.ग्रा. फास्फोरस का प्रयोग बुआई के समय कूंडो में करना चाहिए। चने में गंधक की आवश्यकता होती है। फास्फेट तत्व के लिए सिंगल सुपर फास्फेट का प्रयोग करने से गंधक की आवश्यकता स्वतः पूरी हो जाती है। अतः चने की सफल खेती के लिए 35–40 कि.ग्रा. यूरिया तथा 250–300 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट का प्रयोग करें।

खरपतवार नियंत्रण : बोआई के बाद लगभग 25–30 दिन पर निकाई करें। रसायनों द्वारा खरपतवार नियंत्रण के लिए एलाक्लोर 50 ई.सी. 500 मि.ली. मात्रा प्रति एकड़ की दर से बोआई के तुरन्त बाद 200–250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

सिंचाई : प्रथम सिंचाई बोआई के 45–50 दिनो बाद फूल आने से पहले करें। दूसरी सिंचाई फलियों में दाना बनते समय बोआई के 90–100

गोड़ाई/कोड़नी के बाद यानी 20-25 दिनों में टापड्रेस करना चाहिए।

असिंचित दशा : 40 एम. : 50 पी. : 40 के. कि.ग्रा./हे.

सिंचित दशा : 60 एम. : 90 पी. : 60 के. कि.ग्रा./हे.

खरपतवार नियंत्रण

फसल को 45 दिनों तक खरपतवार रहित रखना चाहिए। इसके लिए खेत की कोड़ाई 20-25 दिनों में तथा दूसरी कोड़नी 35 से 40 दिनों में करना जरूरी है। अच्छा होगा अगर पूर्व अंकुरण व्रणनाशी लासो या बासोलीन 1.5 कि.ग्रा./हेक्टेयर का छिड़काव बुआई के तुरन्त बाद कर दें। इससे खरपतवार की समस्या से काफी कुछ राहत मिल जाती है।

सिंचाई

रबी या बसन्त या ग्रीष्म मौसम में बुनी गई सूर्चमूखी की फसल को 15-20 दिनों को अन्तराल में भारी मिट्टी में तथा 8-10 दिनों के अन्तराल में हल्की मिट्टी में सिंचाई की आवश्यकता होती है। साधारणतया इस फसल को 6-10 सिंचाई की जरूरत होती है। ध्यान रखना चाहिए कि फसल को क्रान्तिक वर्धन अवस्था जैसे कली प्रवर्तन (20-25 दिन बाद), वटन अवस्था (35-40 दिन), पुष्प प्रवर्तन (55-60 दिन) एवं बीज परिवर्धन (75-80 दिन) में नमी की कमी न हो अत: इन क्रान्तिक वर्धन अवस्थाओं में सिंचाई अति आवश्यक है।

पौधा संरक्षण

इस क्षेत्र के लिए नई फसल होने के कारण अभी इस फसल में कीट एवं व्याधियों का प्रकोप अधिक नहीं है। अभी रतुआ, पत्रलांक्षण व्याधियाँ एवं जैसीड़, शीर्ष छेदक भुआ पिल्लु का प्रकोप की पाया गया है। अगर इन कीट व्याधियों पर नियंत्रण नहीं किया गया तो इनका प्रसार असम्भावी है।

रतुआ एवं पत्रलांछन व्याधियों के लिए डाइथेन एम.-45 (0.02%) या मनकोजेब (0.25%) का छिड़काव 15-15 दिनों के अन्तराल में करें। शीर्ष छेदक एवं जैसीड कीटों के नियंत्रण के लिए मानोक्रोटोफास (0.05%)या इन्डोसल्फान (0.07%) का छिड़काव आवश्यकतानुसार करना चाहिए।

भुआ पिल्लू की रोकथाम के लिए प्रारम्भिक अवस्था ही में कीड़ों को एकत्र कर मार देना चाहिए। सूड़ियाँ जब खेत में फैलने लगे तो डाइक्लोरफास 300 मि.ली. / हे. छिड़काव करें पर यदि सूड़ियाँ रोयेंदार हो तो इन्डोसल्फान 0.2% का छिड़काव इनके नियंत्रण के लिए आवश्यक है।

कटनी एवं दौनी : जब फसल के छत्तों पर पिछलाभाग पीला पड़ जावे तो समझना चाहिए कि फसल तैयार हो गई है तब इसे डण्ठल समेत काट कर छायेदार जगह में एकत्र कर एक सप्ताह बाद धूप में सुखाकर डण्डे से पीट-पीट कर या छत्ते को लोहे के जाली में रगड़-रगड़ कर बीजों को निकाल लेना चाहिए। तदन्तर बीजों को भली भाँति साफ कर तथा धूप में भलि-भाँति सुखा कर भण्डारण करना चाहिए। इस प्रकार सूर्यमुखी की असिंचित दशा में 8-10 क्विं./हे. एवं सिंचित दशा में 15-20 क्विं./हे. उपज मिल जायेगी।

लेखक:

डॉ. सोहन राम, डॉ. नूतन वर्मा एवं डॉ. एस.के. सिंह

पौधा प्रजनन एवं आनुवंशिकी विभाग

बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची, झारखण्ड

* प्रसार पुस्तिका में उल्लेखित विचार लेखक के हैं। किसी भी प्रकार के असंगत विचार के प्रति प्रकाशक उत्तरदायी नहीं होंगे।

132/01/06 **कैलाश पेपर**, फोन : 0651-2532251

समेति तथा कृषि एवं गन्ना विकास विभाग, झारखण्ड सरकार के सौजन्य से प्रकाशित

एग्रीरिफोंम्स तकनीकी प्रसार पुस्तिका : 8/2006

झारखण्ड सरकार

झारखण्ड में सूर्यमुखी की उन्नत खेती की संभावनाएँ

राज्य स्तरीय कृषि प्रबंधन, प्रसार-सह-प्रशिक्षण संस्थान

(समेति, झारखण्ड)

कृषि भवन प्रांगण, काँके रोड, राँची

सूर्यमुखी एक प्रकाश असंवेदी फसल है जो वर्ष भर किसी भी मौसम में हर तरह की मिट्टी - काली, लाल एवं लवणीय मिट्टी में लगाई जा सकती है। लघु अवधि की फसल होने के कारण शुद्ध फसल के अलावा बहुफसलीय तथा अन्तराल खेती और सूखा सहनशील होने के कारण शुष्क भूमि खेती के लिए यह बहुत ही उपयुक्त है। इसके बीजों में सोयाबीन से भी ज्यादा प्रोटीन तथा 40 से 45 प्रतिशत तेल पाया जाता है। इसके अतिरिक्त थायामीन, कैल्सियम, नाइसिन, विटामीन-डी एवं लौह भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। इस फसल का तेल एक उत्तम स्वास्थ्यवर्द्धक खाद्य तेल है जो मुख्यत: उच्च रक्तचाप/हृदयरोगों से पीड़ित व्यक्तियों के लिए असंतृप्त वसा अम्लों की प्रचुरता एवं न्यूनतम् कोलेस्ट्राल की मात्रा होने के कारण लाभप्रद है। वसा की आपूर्ति के लिए चिकित्सक इस खाद्य तेल को हृदय रोगियों के लिए अनुशंसित करते हैं। सूर्यमूखी का आटा तैलीय गुणों से पूर्ण होता है तथा इसके बीज मुर्गियों एवं पशुओं के लिए उत्तम खाद्य-पदार्थ है।

नई फसल होने के कारण इस प्रान्त के किसान सूर्यमुखी की खेती से अनभिज्ञ है। इस फसल की खेती यदि उन्नत तरीके से की जाए तो हमारे कृषक बंधु इसकी खेती से अन्य फसलों की तुलना में अधिक आय प्राप्त कर सकते हैं। अत: सूर्यमूखी की अच्छी पैदावार हेतु निम्नलिखित तरीके से खेती करनी चाहिए।

भूमि एवं उसकी तैयारी

सूर्यमुखी की खेती, जैसा मैने पहले ही बताया है कि किसी भी प्रकार की मिट्टी में की जा सकती है पर अच्छी जल निकास वाली गहरी दोमट मिट्टी जिसकी उर्वरता अच्छी हो बहुत ही उत्तम होती है। खेत की 2-3 जुताई कर पाटा चलाकर मिट्टी भुरभूरी कर ले।

उन्नत प्रभेद

सूर्यमुखी में अनेक प्रभेदों एवं संकर किस्मों को विभिन्न प्रान्तों एवं क्षेत्रों के लिए अनुशंसित किया गया है। झारखण्ड राज्य के लिए उन्नत एवं अनुशंसित किस्में हैं -

मॉडर्न : यह किस्म 75 से 80 दिन में तैयार हो जाती है तथा शुद्ध फसल के अतिरिक्त बहुफसली एवं मिश्रित खेती के लिए अति उपयुक्त है। इसकी औसत उपज 10-12 क्विं./हे. है।

सूर्या के. - 1 - यह किस्म भी लगभग 80 दिनों में तैयार हो जाती है तथा 10-12 क्विं/हे. की औसत उपज देती है।

बी.एस.एच. 1 - यह एक संकर किस्म है जो रतुआ प्रतिरोधी एवं आल्टरनेरिया पत्रलांछन के प्रति सहिष्णु है तथा 90 से 95 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी उपज क्षमता 16-20 क्विं/हे. है।

बीज दर एवं बीजोपचार

सूर्यमुखी के किसी भी प्रभेद एवं संकर किस्म को बोने के लिए 10 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर बीजों की आवश्यकता होती है। बीजों में अंकुरण की समस्या से निदान पाने के लिए इन्हें पानी में भिंगोकर हल्के बीजों को हटा देना चाहिए तथा अन्य बीजों को 12 घंटे पानी में रखकर तथा पानी से निकाल कर छाया में सुखा लेना चाहिए एवं बोने के पूर्व 2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज के अनुसार कैप्टन या थिरम या बैविस्टीन से उपचारित करना चाहिये।

बीज बोने का समय एवं तरीका

प्रकाश के प्रति संवेदनशील होने से सूर्यमुखी को कभी भी बुना जा सकता है। खरीफ मौसम में जुलाई मास का अंतिम सप्ताह मारडेन को छोड़कर अन्य किस्मों के लिए उपयुक्त समय है जबकि मारडेन किस्म को अगस्त मास तक बोया जा सकता है। रबी मौसम में अक्टुबर-नवम्बर एवं बसन्त मौसम में जनवरी-फरवरी मास सूर्यमुखी के बीजों को बोने का उपयुक्त समय है। बीज को 5 से.मी. से गहरा न बुवे तथा एक स्थान में

2-3 बीज ही गिरावें। बीज से बीज की दूरी 20 से.मी. एवं कतारों की दूरी 45 सें.मी. रखना चाहिए। अंकुरण हो जाने के 15 दिन बाद एक स्थान पर एक ही पौध को रखना चाहिए।

उर्वरक प्रबन्धन

सूर्यमुखी की उपज क्षमता के दोहन के लिए जरूरी है कि फसल को पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्वों की उपलब्धता हो। अत: असिंचित (खरीफ मौसम) एवं सिंचित दशा (रबी/बसन्त/ग्रीष्म) के लिए अनुशंसित उर्वरकों की मात्रा को अवश्य देना चाहिए। ध्यान रखना चाहिए कि नेत्रजन की आधी मात्रा एवं फास्फेट तथा पोटाश की पूरी मात्रा को बुनने के समय देना चाहिए जबकि शेष बची नेत्रजन की मात्रा को प्रथम

40 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 20 कि.ग्रा. पोटाश बुआई के पहले कतारों में डाल दें। मसूर की फसल प्रायः धान फसल कटाई के बाद ली जाती है। इस कारण मृदा में जिंक तत्त्व की कमी होती है। इस कमी को दूर करने के लिए 15–20 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हेक्टर की दर से उर्वरकों के साथ प्रयोग करें।

खरपतवार नियंत्रण :

परीक्षणों के आधार पर पाया गया है कि खरपतवारों के कारण मसूर की उपज में 40 से 90 प्रतिशत तक की कमी हो सकती है। यांत्रिक विधि द्वारा खरपतवार नियंत्रण के लिए फसल को बुआई के 25–30 दिन व 45–50 दिन बाद दो निराई–गुड़ाई आवश्यकतानुसार की जानी चाहिए। रासायनिक विधि द्वारा खरपतवार नियंत्रण के लिए बेसालिन 0.75% सक्रिय तत्त्व को 800–1000 लीटर पानी घोलकर प्रति हेक्टर की दर से बुआई से पहले मिट्टी को हैरो या कल्टीवेटर की सहायता से मिला दें ।

रोग एवं रोकथाम :

मसूर को मुख्यतः दो फफूँदीजनित रोग 'उकठा' व 'रतुआ' सर्वाधिक नुकसान पहुँचाते है।

उकठा : उकठा रोग के प्रकोप से पौधे पीले पड़कर सूख जाते है। उकठा प्रभावित क्षेत्र में लम्बी अवधि का फसल चक्र अपनाना चाहिए। रोगरोधी किस्में जैसे पी.एल 406 और पी.एल. 639 का प्रयोग करना चाहिए।

रतुआ : रतुआ रोग से प्रभावित पौधे की पत्तियों व तने पर भूरे रंग के धब्बे दिखाई देने लगते है। इससे पौधे की प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया धीमी हो जाती है जिससे फसल पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ता है। इस रोग की रोकथाम हेतु रोगरोधी किस्मों जैसे एल. 9–12 और पी.एल. 406 का प्रयोग करना चाहिए तथा इसके नियंत्रण के लिए मैंकोजेब 2.0 कि.ग्रा. का प्रति हेक्टर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

कीट एवं रोकथाम :

मसूर की फसल को मुख्य रूप से रोयेंदार गिडार, माहू व फली छेदक अधिक हानि पहुँचाते हैं। रोयेंदार गिड़ार की रोकथाम के लिए 1.25 ली. थायोडान को 800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टयर फसल पर छिड़काव करे। माहू व फली छेदक की रोकथाम हेतु मोनोक्रोटोफॉस 36 ई.सी. की 800 मि.ली. मात्रा को 800 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करे।

कटाई एवं भण्डारण :

जब फलियाँ और पत्तियाँ भूरी पड़ जाये, तब फसल की कटाई कर लेनी चाहिए। काटे हुए फसल को घूप में सुखाकर भली–भांति दौनी कर ले। दौनी की गयी फसल को 2–3 दिनों तक धूप में सूखाकर भण्डारण करें।

लेखकः

डॉ. नूतन वर्मा एवं डॉ. सोहन राम

पौधा प्रजनन एवं आनुवंशिकी विभाग

बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, राँची, झारखण्ड

* प्रसार पुस्तिका में उल्लेखित विचार लेखक के हैं। किसी भी प्रकार के असंगत विचार के प्रति प्रकाशक उत्तरदायी नहीं होंगे।

132/01/06 कैलाश पेपर, फोन : 0651.2532251

समेति तथा कृषि एवं गन्ना विकास विभाग, झारखण्ड सरकार के सौजन्य से प्रकाशित

एग्रीरिर्फोम्स तकनीकी प्रसार पुस्तिका : 7/2006

झारखण्ड सरकार

झारखण्ड में मसूर की वैज्ञानिक खेती

राज्य स्तरीय कृषि प्रबंधन, प्रसार-सह-प्रशिक्षण संस्थान

(समेति, झारखण्ड)

कृषि भवन प्रांगण, काँके रोड, राँची

रबी की दलहनी फसलो में मसूर का प्रमुख स्थान है। इसकी खेती सभी प्रकार की मृदाओं, परिस्थितियों व असिंचित क्षेत्रों में भी सफलतापूर्वक की जा सकती है। मूसर का उपयोग दाल, नमकीन व अन्य खाद्य पदार्थो के अतिरिक्त मवेशियों के दाना व चोकर के रूप में भी किया जाता है। मसूर की दाल पोषक तत्वों के लिए एक सस्ता एवं प्रमुख स्त्रोत है। इसमें 24–26 प्रतिशत प्रोटीन, 1.3 प्रतिशत वसा, 2.2 प्रतिशत लवण तथा पर्याप्त मात्रा में कैल्शियम, लोहा, विटामिन सी तथा राइबोफ्लोविन होता है। इस फसल को उगाने से मृदा की उर्वरा शक्ति में वृद्धि के साथ–साथ भौतिक दशा में भी सुधार होता है।

वैज्ञानिक विधि से खेती करके झारखंड में मसूर का उत्पादन काफी हद तक बढ़ाया जा सकता है। अतः फसल की अच्छी पैदावार हेतु निम्नलिखित वैज्ञानिक विधियों को अपनाकार खेती करना आवश्यक है :

उन्नत किस्में :

उन्नत किस्मों के प्रयोग से मसूर के उत्पादन में 20–30 प्रतिशत तक वृद्धि की जा सकती हैं। इस प्रदेश के लिए उन्नत प्रजातियाँ निम्नलिखित है :

बी.आर.-25 : यह बड़े आकार के बीज वाली किस्म है तथा स्थानीय जनन–द्रव्य से तैयार की गयी है। इसकी पत्तियाँ रोयदार और गहरे

हरे रंग की होती है। फूल हल्के गुलाबी तथा बीज ईट जैसे लाल रंग के एवं बीच–बीच मे कालें धब्बे वाले होते हैं। यह किस्म 120–125 दिनों में पक कर 13–15 क्विं/हे0 की औसत उपज देती है।

एल 9-12 : यह किस्म 130–135 दिनों में पककर 15–18 क्विं./हे. की औसत उपज देती है। इसके पौधे झाड़ीदार एवं ऊर्ध्व, फूल बैंगनी रंग के तथा बीज भूरे–धूसर रंग के चित्तीदार होते है। इस किस्म के पौधे 'रस्ट' के प्रति अवरोधी होते है।

पी.एल.-406 : यह किस्म 130–140 दिनों में पककर 18–20 क्विं./हे. की औसत उपज देती हैं। इसके पौधे थोड़ा फैलाव लेने वाले होते है तथा हल्के हरे रंग के होते हैं। इसके फुल बैंगनी रंग के और बीज मध्यम आकार के एवं गुलाबी–धूसर रंग के होते है। यह किस्म 'रस्ट' के प्रति अवरोधी है एवं विलम्ब से बोआई के लिए उपयुक्त है।

पी.एल.-639 : यह किस्म 130–135 दिनों में पककर 18–20 क्विं./हे. की औसत उपज देती है। इसके पौधे भी थोड़ा फैलाव लेने वाले होते हैं। पुष्प बैंगनी रंग के एवं बीज माध्यम आकार व धूसर रंग के होते है। यह किस्म 'बिल्ट' और ब्लाइट' बिमारियों के प्रति अवरोधी है।

भूमि का चयन व तैयारी :

मसूर सभी प्रकार की मृदाओं में उगाई जा सकती है। उत्तम जल निकास वाली दोमट मिट्टी मसूर की खेती के लिये सबसे उपयुक्त मानी जाती है। खरीफ की फसल काटने के पश्चात भूमि को एक गहरी जुताई कर लें तथा उसके बाद दो–तीन जुताई हैरो या देशी हल से करके पाटा चलाकर खेत को समतल कर लें। बुआई के समय भूमि में पर्यापत नमी का होना अति आवश्यक है ।

बुआई का समय :

मसूर के अच्छी फसल के लिए मध्य अक्टूबर से नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक का समय सर्वोत्तम है। बुवाई के समय कतार से कतार की दूरी 25–30 से.मी. तथा पौधा से पौधा की दूरी 8–10 से.मी. रखें।

बीज व बीजोपचार :

एक हेक्टर भूमि में बुआई के लिये 25–30 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। बुआई से पूर्व प्रति किलोग्राम बीज को 3 ग्राम थीरम या 2 ग्राम बॉविस्टीन से उपचारित कर लें। ऐसा करने से बीज द्वारा आने वाली बीमारियाँ नष्ट हो जाती है। यदि खेत में मसूर की फसल पहली या 4–5 वर्ष के बाद उगाई जा रही है तो बीज के बुवाई से पूर्व मसूर के विशिष्ट राइजोबियम कल्चर (रा. लेम्यूमिनोसेरम) से उपचारित कर लेना चाहिए। 10 कि.ग्रा. बीज के लिये एक पैकेट (250 ग्राम) राइजोबियम कल्चर (जीवाणु खाद) पर्याप्त रहता है। प्रयोग विधि पैकेट पर लिखी होती है।

उर्वरक प्रबन्धन :

उर्वरक के रूप में मसूर की अच्छी फसल के लिए प्रेति हेक्टेयर 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, कमी